न्यायपालिका पर काम का बोझ

हमेशा की तरह सत्ता पक्ष इसके लिए विपक्ष की हठधर्मिता को और विपक्ष सरकार की जिद को दोषी बता रहा है। समझने की बात यह है कि इस तरह का परस्पर दोषारोपण हालात को सुधारने में या मौजूदा स्थिति के दुष्परिणामों को कम करने में रत्ती भर भी मदद नहीं करता।

अनुज शर्मा।।

देश के मुख्य न्यायाधीश जस्टिस एन वी रमना ने कहा है कि संसद में बगैर गंभीर बहस के कानून बनाने की तेज होती प्रवृत्ति न केवल कानूनों की क्वॉलिटी को प्रभावित कर रही है बल्कि न्यायपालिका पर काम का बोझ भी बढ़ा रही है। आजादी के 75वें वर्ष में प्रवेश के मौके पर सुप्रीम कोर्ट बार असोसिएशन की ओर से आयोजित समारोह में दिया गया जस्टिस रमना का यह संबोधन इस लिहाज से भी महत्वपूर्ण है कि यह हमें याद दिलाता है कि संसदीय लोकतंत्र में शासन के कोई भी एक अंग अगर अपने कामकाज में लापरवाही बरतता है तो उसका प्रभाव शासन के अन्य अंगों पर और अंततः पूरी लोकतांत्रिक व्यवस्था पर पड़ता है।

जस्टिस रमना ने यह बात ऐसे समय कही, जब संसद का मॉनसून सत्र हंगामे और शोर–शराबे की भेंट चढ़ कर समाप्त हुआ है। इस सत्र के दौरान करीब–करीब सारे विधेयक बिना बहस के पारित किए गए। हालांकि सत्ता पक्ष और विपक्ष दोनों ही इस स्थिति को दुर्भाग्यपूर्ण बताते हैं, लेकिन इसकी जिम्मेदारी लेने के लिए इनमें से कोई भी तैयार नहीं। हमेशा की तरह सत्ता पक्ष इसके लिए विपक्ष की हठधर्मिता को और विपक्ष सरकार की जिद को दोषी बता रहा है। समझने की बात यह है कि इस तरह का परस्पर दोषारोपण हालात को सुधारने में या मौजूदा स्थिति के दुष्परिणामों को कम करने में रत्ती भर भी मदद नहीं करता। चीफ जस्टिस रमना ने बाकायदा उदाहरण देकर बताया कि कैसे इंडस्ट्रियल डिस्प्यूट एक्ट अमेंडमेंट बिल पर बहस के दौरान सीपीएम से जुड़े तमिलनाडु के एक सांसद ने उसके संभावित दुष्परिणामों पर रोशनी डाली थी और बताया था कि इसका श्रमिकों पर बुरा असर पड़ेगा। कानून बनते समय संसद में पर्याप्त बहस न होने से यह साफ नहीं होता कि आखिर संबंधित कानून लाने के पीछे मकसद क्या है। दूसरी बात यह कि बहस के अभाव में कानूनों में संदेह और दुविधा की काफी गुंजाइश रह जाती है। इससे जहां अदालतों में याचिकाओं की संख्या बढ़ती है, वहीं कानूनों की व्याख्या करने का अदालत का काम भी कठिन हो जाता है।

फिर भी, संसद में बहस का न होना समस्या का एक पहलू है। दूसरा पहलू यह है कि जब बहस होती भी है तो उसका वैसा स्तर नहीं होता जो अपेक्षित है। संसद में बहस के स्तर में भी गिरावट आई है। चाहे सत्ता पक्ष हो या विपक्ष, दोनों खेमों में राजनीतिक नेतृत्व को दूसरे पक्ष के मत्थे दोष मढ़ कर अपनी जिम्मेदारी समाप्त मान लेने की परिपाटी से ऊपर उठना पड़ेगा। तभी संसद की पुरानी गरिमा बहाल होगी और तभी वह कानून बनाने की अपनी जिम्मेदारी का सही ढंग से निर्वाह कर पाएगी।

प्रेमास्पद

धर्म-दर्शन

अशोक वोहरा। हमे नित्य प्रतिदिन संसार में रहते हुए विष रूपी विषयों का चिंतन त्याग कर अमृतस्वरूप उस परम प्रेमास्पद परमात्मा का स्मरण करना चाहिए। लेकिन भक्ति का सूत्र मत छोड़ों क्योंकि उसके प्रभाव से तुम्हारा जीवन तो सुधरेगा ही, साथ ही कुछ लोगों का भी कल्याण अवश्य होगा।

यह एक सच्ची कहानी है जीवन नाम का एक व्यक्ति किसी गांव में रहता था जीवन अपने लिए हमेशा बहुत खाना रखता था क्योकि उसे बहुत भूख लगती थी जीवन बहुत खाना खाता था इसलिए उसे हमेशा भूख ही लगी रहती थी अगर जीवन से कोई आदमी कहे की अभी तुम्हे भूख हैतो जीवन के मुँह से कभी न नहीं निकलती थी। क्या करू अब तो मेरा घर भी नहीं है तभी उसकी नजर एक साधु बाबा पर पड़ी और जीवन उनके पास चला गया।

संपादकीय

महज कानून व्यवस्था नहीं

एक बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह पूरा घटनाक्रम सिर्फ कानून व्यवस्था का मामला न समझ लिया जाए। इसके गहरे निहितार्थों, लक्ष्यों और दूरगामी प्रभावों का भी खयाल किया जाना चाहिए। तभी भविष्य में ऐसी घटनाओं को होने से रोका जा सकेगा। किसान संगठनों को भी सावधान रहना होगा कि उनके समर्थक हिंसक ना हों। आज की लड़ाइयां छवियां बनाने और बिगाड़ने की भी लड़ाइयां हो गई हैं। सोशल मीडिया के इस दौर में सबका अपने हिस्से का सच है। इसी परिपाटी के मुताबिक किसान संगठन अपना सच दिखा रहे हैं और दूसरा पक्ष उन्हें अधूरा बता रहा है। इसी तरह आरोपी पक्ष अपना सच दिखा रहा है और किसान संगठन इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। लेकिन जिस तरह हिंसा हुई है, गिरे पड़े लोगों को बेरहमी से पीटा जा रहा है, उसे राजनीति और आंदोलन तो कहा ही नहीं जा सकता। यह निर्मम हत्याओं का मामला है और इस मामले में कानून को अपना काम करना चाहिए। योगी सरकार ने ठीक ही हाईकोर्ट के अवकाशप्राप्त न्यायाधीश से पूरे मामले की जांच कराने का फैसला किया है। उम्मीद की जानी चाहिए कि जांच में पूरे तथ्य सामने आएंगे और दोषियों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई होगी। हिंसा अंततः हर पक्ष के लिए नुकसानदायक होती है। लेकिन लाख टके का सवाल है कि बक्कल उतारने की भाषा का इस्तेमाल करने वाला किसान आंदोलन का नेतृत्व इस तथ्य को समझने की कोशिश करेगा?

आग में घी की तरह उन संवेदनशील मुद्दों को भी डाला जाएगा, जिनसे लोकहित को नुकसान पहुंच सकता है। राजनीतिक फायदों के लिए उछाले जाने वाले मुद्दों को भी लोक, समाज और राष्ट्रहित के मुलम्मे में पेश किया जाएगा।

नजर चुनावों पर

उमेश चतुर्वेदी।।

राजनीति का लक्ष्य जब से सिर्फ सत्ता प्राप्ति तक सीमित हो गया है, तब से हर मुद्दे के पीछे राजनीति ही देखी जाने लगी है। आम लोग भी अब यह समझते हैं कि जहां चुनाव करीब होंगे, वहां के मुद्दों को राजनीतिक आंच पर पकाया जाएगा। आग में घी की तरह उन संवेदनशील मुद्दों को भी डाला जाएगा, जिनसे लोकहित को नुकसान पहुंच सकता है। दल या व्यक्ति विशेष के राजनीतिक फायदों के लिए उछाले जाने वाले मुद्दों को भी लोक, समाज और राष्ट्रहित के मुलम्मे में पेश किया जाएगा। लखीमपुर खीरी की त्रासद घटना के बाद भी ऐसी ही कोशिश हो रही है।

उत्तर प्रदेश में कुछ महीने बाद विधानसभा चुनाव होने हैं। लखनऊ की सत्ता पर कब्जे के लिए तमाम राजनीतिक दल अपने–अपने समर्थक आधार के लिहाज से मुद्दे तलाशने–बनाने और उछालने में जुट गए हैं। ऐसे माहौल में लखीमपुर की घटना ने उन्हें मुफीद मौका दे दिया है। स्वाधीन भारत में मान्यता रही है कि दिल्ली के तख्त की राह उत्तर प्रदेश से ही गुजरती है। विपक्ष को लगता है कि अगर उसने बीजेपी को अवध, पूर्वांचल, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और रूहेलखंड की धरती पर मात दे दी तो दिल्ली के तख्त पर मजबूती से जमी सत्ता को उखाड़ फेंकना उनके लिए आसान होगा। यही वजह है कि लखीमपुर की आग पर राजनीतिक रोटी सेंकने की मियाद बढ़ने की आशंका है। हालांकि घटना के फौरन बाद जिस तरह योगी सरकार ने कार्रवाई की और जैसे कदम उठाए, उससे फिलहाल मामला शांत होने की ओर बढ़ता दिख रहा है। चाहे मारे गए किसानों के परिजनों को 45–45 लाख रुपये का मुआवजा देना हो, हाईकोर्ट के अवकाशप्राप्त न्यायाधीश से मामले की जांच कराने का फैसला हो या फिर केंद्रीय गृहराज्य मंत्री अजय मिश्र के आरोपी बेटे पर केस दर्ज करना, योगी सरकार ने इन फैसलों के जरिए मामले को संभालने की कोशिश की।

फिर भी इस घटना ने कुछ गंभीर सवाल खड़े किए हैं। आखिर इस उग्र घटना को भांपने में उत्तर प्रदेश पुलिस और उसकी स्थानीय खुफिया व्यवस्था नाकाम क्यों रही? अतीत में किसान आंदोलन उत्पात कर चुका है। इसलिए यह भी नहीं कहा जा सकता कि प्रशासन को इन घटनाओं का अंदेशा नहीं था। कृषि कानून का समर्थक खेमा बार–बार यह आशंका जताता रहा है कि किसान आंदोलन की आड़ में असामाजिक तत्व अप्रिय घटनाओं को अंजाम दे सकते हैं। इसके मद्देनजर प्रशासन को जिस स्तर पर अलर्ट होना चाहिए था, कम से कम लखीमपुर खीरी में वैसा नहीं दिखा। अगर प्रशासन अलर्ट होता तो इस अप्रिय घटना को टाला जा सकता था।

दूसरी बात यह कि चाहे मारे गए किसान हों, स्थानीय पत्रकार रमण कश्यप हों या हिंसा का शिकार हुए अन्य लोग, वे सब इसी देश के नागरिक थे। राजनीति बार–बार दावे करती है कि उसका लक्ष्य व्यापक लोक हित का ध्यान रखना है। यही वजह है कि गोविंदाचार्य ने सभी राजनीतिक दलों से अपील की कि वे इस घटना का राजनीतिक फायदा उठाने के बजाय मामले को ठंडा करने की सोचें। लेकिन अपने–अपने फायदे की चाशनी देख रही राजनीति को गोविंदाचार्य के शब्द क्यों लुभाते?

संविधान को स्वीकृति दिए जाने के दिन संविधान सभा में डॉक्टर आंबेडकर ने साफ कहा था कि आजाद भारत में आंदोलन और धरने आदि से बचना होगा। उनके हिसाब से आजादी मिलने के साथ ही उनकी उपादेयता खत्म हो गई थी।

सूडोकू बवाल-5388

★☆☆☆☆ सरल

5	9			3			8	7
8	7		1		5			
		2			9			4
	6				2		3	5
3	8		4	1	7		2	9
2	4		6				1	
7			3			8		
			5		8		7	3
9	3			2			6	1

- प्रत्येक पंक्ति में 1 से 9 तक के अंक भरे जाने आवश्यक हैं.
- प्रत्येक आड़ी और खड़ी पंक्ति में एवं 3×3 के वर्ग में किसी भी अंक की पुनरावृत्ति न हो इसका विशेष ध्यान रखें.
- पहले से मौजूद अंकों को आप हटा नहीं सकते.
- पहेली का केवल एक ही हल है.

सूडोकू बवाल -5387 का हल

7	4	8	3	9	2	1	5	6
2	6	9	5	7	1	8	4	3
3	1	5	4	8	6	7	2	9
5	7	4	8	6	9	3	1	2
8	9	1	2	3	4	6	7	5
6	3	2	1	5	7	4	9	8
4	8	7	6	2	5	9	3	1
9	2	6	7	1	3	5	8	4
1	5	3	9	4	8	2	6	7

अपना ब्लॉग

बड़ी रकम भी किसी जिंदगी के बराबर नहीं

मोहन। राजनीति आंबेडकर को तो खूब याद करती है, लेकिन उनके इन शब्दों को याद करना नहीं चाहती। शायद राजनीति समझती है कि अगर वह ऐसी घटनाओं का फायदा नहीं उठाए तो अप्रासंगिक हो जाएगी। सुप्रीम कोर्ट ने किसान कानूनों के बारे में दायर याचिका की सुनवाई करते हुए ठीक ही कहा है कि जब भी लखीमपुर जैसी घटनाएं होती हैं, तो उनकी जिम्मेदारी लेने के लिए कोई आगे नहीं नहीं आता। लखीमपुर की आठ जानों के बदले में चाहे जितना भी मुआवजा मिले, सामाजिक संगठन चाहे जितनी मोटी रकम जुटा लें, पर बड़ी से बड़ी रकम भी किसी जिंदगी के बराबर नहीं हो सकती। जो इस घटना में मारे गए हैं, भविष्य में उनकी कमी की कीमत उनके परिवार चुकाएंगे। तब ना तो राजनीति नजर आएगी, ना ही प्रशासन। लोगों के बीच मतभिन्नताएं हो सकती हैं, किसी मसले पर उनके अलग–अलग विचार हो सकते हैं। इसका यह मतलब नहीं है कि विचारों की भिन्नता को लेकर किसी की हत्या कर दी जाए।